# चन्दामामा

## दीवाली विशेषांक

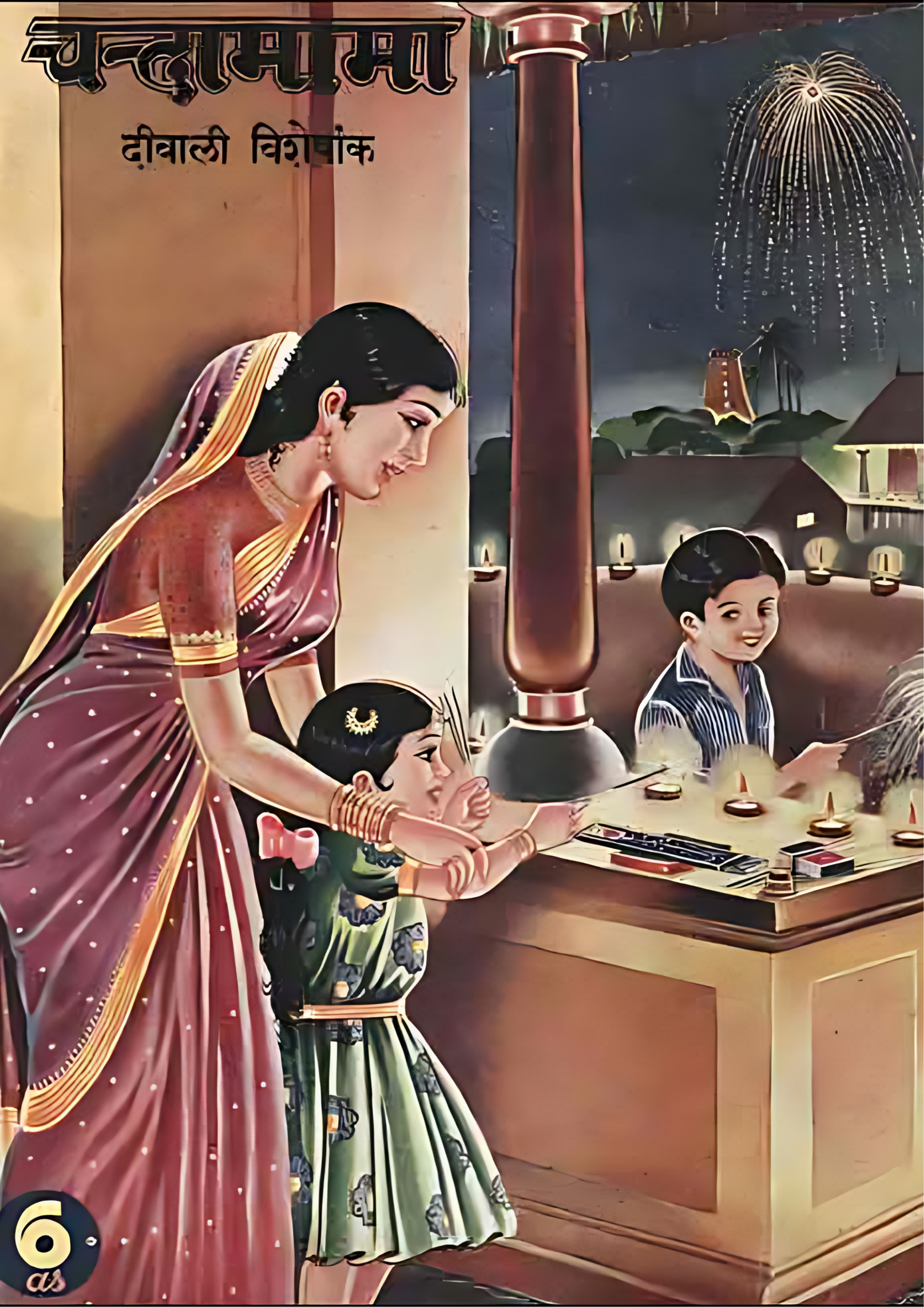

पुराने जमाने की बात है। उस समय विष्णु भोज काशी का राजा था। तभी भगवान बोधिसत्व, एक खूबसूरत बछड़े के रूप में पौदा हुए। वह बछड़ा काले रङ्ग का था, और देखने में बड़ा ही लुभावना लगता था। उस बछड़े को देख कर उसका मालिक उस पर अत्यन्त मुग्ध रहने लगा।

उस बछड़े का मालिक एक गरीब औरत के घर में रहता आया था। मगर कुछ दिनों के बाद उसे वह गाँव छोड़ देना पड़ा। जाते समय उसने घर-भाड़ा के रूप में वह बछड़ा उस बूढ़ी को दे दिया।

बूढ़ी माँ के कोई बाल बच्चा नहीं थे। इसलिए उस काले बछड़े को उसने अत्यन्त लाड़-प्यार से पाला-पोसा। बूढ़ी माँ भात पकाने के लिए जब चावल धोती, तब उस धोवन को, और जब माड़-पसाती तो उस माड़ को चुन्नी भूसी में मिला कर बढ़िया सानी तैयार करती और अत्यन्त छोह-मोह से उस भोले जानवर को खिलाती-पिलाती। रोज नहर में ले जाकर खूब अच्छी तरह उसे धोती-पोंछती थी। इतने लाड़-प्यार से पाले हुए उस बेटे से बछड़े को वह बूढ़ी माँ कभी खूँटे से नहीं बाँधती थी। खेलते-कूदते उस बछड़े के माथे में सहसा सीङ्ग निकलने लगे। गाँव के और पशुओं के साथ वह स्वेच्छा-पूर्वक घूमा-फिरा करता था। गाँव के लड़के उसकी पूँछ पकड़ कर शौक से दौड़ते-फिरते थे और उसके साथ दिन भर अनेक खेल खेला करते थे।

एक दिन उस काले बछड़े ने अपने मन में सोचा - "मुझे पालने वाली यह बेचारी

बूढ़ी माँ अत्यन्त गरीब है। मेरे लिए जान देती है, जी तोड़ कर मेहनत करती है। अगर कहीं से मैं कुछ पैसे कमा लाऊँ, तो इसकी तकलीफ़ कुछ कम हो जाए! धन कैसे कमाया जाए ?" इस फिक्र में वह रहने लगा।

ऐसे ही समय पाँच सौ गाड़ियों पर अनाज लाद कर एक व्यापारी उस गाँव से गुजरने लगा। ये गाड़ियाँ डगर से आ रही थीं। बीच में एक सोता आ पड़ा, जिस में बालू ही बालू भरी हुई थी।

कितनी कोशिश की गई, लेकिन व्यापारी का एक भी बैल बालू में गाड़ी नहीं खींच सका। सब गाड़ियाँ सोते के किनारे खड़ी रह गईं। जहाँ-तहाँ से खोज-खाज कर बैल लाए गए, पर फायदा कुछ भी नहीं हुआ।

उस समय काले बछड़े के रूप में भगवान बोधिसत्व अपने साथी जानवरों के साथ सोते के दूसरे किनारे पर घास चर रहे थे। उन पशुओं में से कोई उसके काम आ सकता है या नहीं- यह देखने के लिए वह व्यापारी वहाँ आया।

उस व्यापारी की नजर उस काले बछड़े पर पड़ी। उसने सोचा-"यह बछड़ा काम का मालूम होता है। इसकी सहायता से मेरी गाड़ियाँ सोते को अवश्य पार कर जाएँगी।"

फौरन उस व्यापारी ने चरवाहों से पूछा-"अरे लड़को ! यह काला बछड़ा किसका है ?थोड़ी देर के लिए इसे ले जाने दोगे ? मुझे गाड़ियों को सोते के उस पार ले जाना है। इस के लिए जो उचित समझो, दे दूँगा।" चरवाहे बोले-"ले जाकर इसे गाड़ी में जोत लो न ! इसके लिए पूछ-ताछ क्या ?"

व्यापारी ने उस बछड़े की नाक में नाथ डाल दी, और उसे खींच ले जाना चाहा। लेकिन वह जरा भी अपनी जगह से न टसका। तब उस व्यापारी ने अपने मन में सोचा-"यह बछड़ा अपनी मेहनत का

शायद माकूल मेहनताना चाहता है।"

ऐसा सोच कर वह बोला-"बृषभराज, मेरी पाँच सौ गाड़ियों को तुम सोता पार करा दो। अगर तुम मेरी यह सहायता कर दोगे, तो हर गाड़ी के लिए मैं दो-दो मुहरें यानी कुल एक हजार मुहरें तुम्हें भेंट करूँगा।"

जैसे ही व्यापारी ने यह बात कही, बछड़ा उछला और व्यापारी के बैलों के पास जा खड़ा हुआ। व्यापारी ने उसे गाड़ी में जोत दिया। एक ही झटके में वह गाड़ी को खींच कर उस पार ले गया। इस तरह उसने पाँच सौ गाड़ियों को उस पार पहुँचा दिया। काम पूरा होते ही व्यापारी ने एक गल-पट्टी में पाँच सौ मुहरें डाल कर उसे बछड़े के गले में बाँध दिया। यह देख कर बोधिसत्व ने सोचा-"इस व्यापारी के मन में कपट पैदा हो गया है। अपनी बात से चूक गया है! अच्छा! देख ले..." यह सोच कर वह सब से बड़ी गाड़ी के आगे रास्ता रोक कर खड़ा हो गया और हजार में कोशिश करने पर भी वहाँ से नहीं हटा।

व्यापारी बोला-"अरे! यह मूक जानवर कितना चतुर है। इसे मालूम हो गया कि जितना देना चाहिए, मैंने उसका आधा ही इसके गले में बाँधा

है।" उसने बाकी पाँच सौ मुहरें एक दूसरी गल-पट्टी में डाल कर उसके गले में बाँध दी।

"वृषभराज ! तुम्हारी मेहनत के लिए जो देने का वचन मैंने दिया था, वे हजार मुहरें तुम्हारे गले में लटक रही हैं।"

जैसे ही व्यापारी ने दूसरी पट्टी उसके गले बाँधी, वह बछड़ा उछला और गल-पट्टी को झन झन बजाता, बूढ़ी माँ के पास दौड़ गया। वह काला बछड़ा गली से दौड़ा जा रहा था। झन झन की आवाज़ लड़को को अपनी ओर खींच रही थी। आज वह अपनी माँ के

पास जाने के लिए आतुर हो रहा था। इसलिए अपने साथ खेलने वाले छोटे बच्चों से बच कर वह सोधे अपनी माँ के पास जा खड़ा हुआ।

एक-दो नहीं... पूरी पाँच सौ गाड़ियों को एक बारगी बालू से खींच ले जाने के कारण

वह काला बछड़ा बहुत थक गया था। दोनों आखें अङ्गारों की तरह लाल हो उठी थी।

यों थके माँदे अपने दुलारे बछड़े को देखते ही यह बूढ़ी माँ उठ कर उसे सहलाने लगी। गले पर हाथ फेरते हुए उसकी गल-पट्टियाँ उसे नजर आई।

"यह सब कहाँ से ले आए हो, मेरे सोने के पहाड़?" आश्चर्य से यह पूछ ही रही थी कि चरवाहे दौड़े आए और उन्होंने सारी घटना बूढ़ी को सुना दी।

यह सुन कर बूढ़ी माँ की आँखों में आँसू छल-छला आए। कितनी कड़ी मेहनत उठाई तू ने मेरे लिए, मेरे लाल ! ये मुहरें क्यों ? क्या करूँगी लेकर में ये मुहरें ? तू खुशी से खा-खेल, और मेरी आँखों से ओझल न हो-मेरी इच्छा इतनी ही है। फिजूल की तकलीफ तू क्यों उठाता है ? आ लाल, तू मेरे पास आ।" कहती वह बूढ़ी माँ थकावट दूर करने के लिए उस काले बछड़े के शरीर में तेल मल कर गरम-गरम पानी से नहलाने लगी। फिर उसने गरम-गरम माड़ उसे पीने को दिया। इस तरह और न जाने उसने कितने उपचार उस बछड़े के लिए किए। इस तरह बोधिसत्व ने मातृ-ऋण चुकाया और बहुत दिनों के बाद अपना चोला बदल डाला।

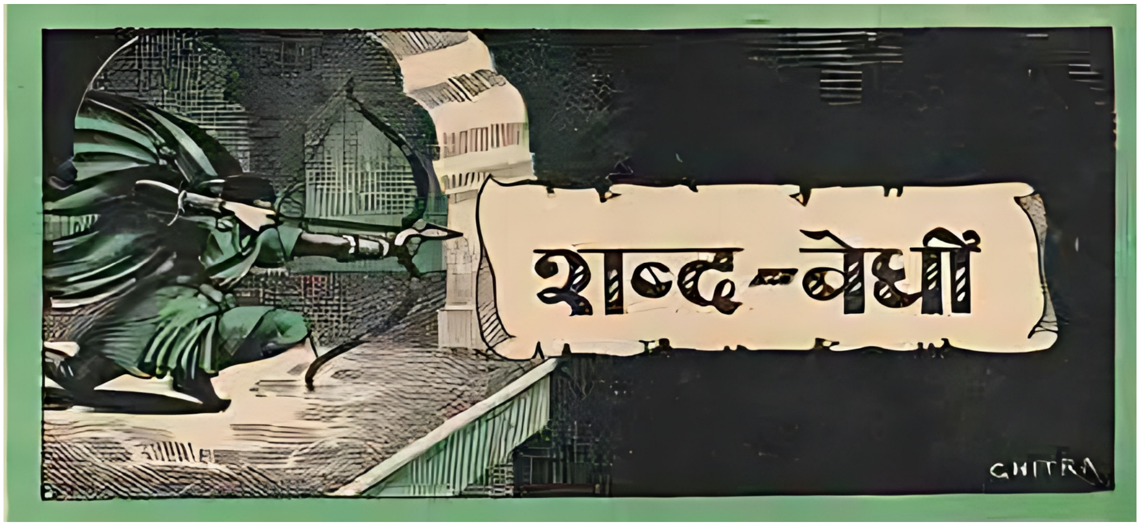


विजयसिंह ने अपने साथियों को उस टूटी धर्मशाला में जमा किया। भीमवर्मा के पञ्जे से करुणा को निकालने के उपाय सोचे जाने लगे। उसे मालूम हो गया था कि भीमसिंह चुप-चाप करुणा की शादी किसी दूसरे से करने जा रहा है। नाथूसिंह ने कहा-"वह दूल्हा कौन है इसकी चिन्ता करते यहाँ बैठे रहने से कोई फायदा नहीं होगा, सीधे भीमसिंह के डेरे पर चढ़ जाना चाहिए, तभी मालूम होगा कि वह आदमी कौन है?"

"वाह वा ! नाथूसिंह तो अकल में अफलातून ही मालूम होता है।" सबों ने कहा।

"राय तो बहुत अच्छी है। लेकिन बिल्ली के गले में घण्टी बाँधे कौन ?" विजयसिंह ने कहा।

"और कौन - हम दोनों ही, समझे? चलो तैयार हो जाओ।" कहता हुआ नाथूसिंह उठ खड़ा हुआ। विजयवर्मा अपने अनुचरों को होशियारी से रहने की बात समझा-बुझा कर नाथूसिंह के साथ चला गया।

नाथूसिंह ने सीधे जङ्गल का रास्ता पकड़ा। कुछ दूर तक उस रास्ते पर चलने के बाद यह रास्ता छोड़ कर नाथूसिंह विजयसिंह को घनी झाड़ियों के बीच ले गया।

दिन-दोपहर को भी वहाँ घोर अन्धकार रहता था। नाथूसिंह ने विजयसिंह को ले जाकर पेड़ों के बीच खड़ा कर दिया। फिर इधर-उधर फैली हुई जङ्गली लताओं के बीच कुछ सूखी लकड़ियाँ फैला कर एक छोटी कोठरी सी बना ली।

"यही मेरा घर है, अच्छा है न ?" नाथूसिंह ने विजयसिंह से पूछा।

"मैं तुम्हारा घर देखने यहाँ नहीं आया हूँ। करुणा को बचाने का उपाय हम को सोचना चाहिए। तुमने जो सोचा है वह उपाय क्या है ?" विजयसिंह गरज कर बोला।

नाथूसिंह हँसा, और उसने चटाई के नीचे से कुछ पुराने कपड़े निकाले। फिर सन्देह से देखते हुए विजयसिंह को दिखा कर कहने लगा-

"अगर हम को भीमसिंह के डेरे पर धावा बोलना है तो वेश बदल कर ही जाना पड़ेगा। उस के दिए सब से अच्छा बेश होगा सन्यासी का। उस वेश में रह कर जरूरत पड़ने पर हम जहाँ चाहें वहाँ धावा बोल सकते हैं। इसकी सहूलियत हमें रहेगी।"

यह उपाय विजयसिंह को खूब जँच गया। नाथूसिंह ने एक पल में अपना बेश बदल लिया। गेरुआ कपड़े पहन लिए, गले में रुद्राक्ष की माला डाल ली और हाथ में कमण्डल ले लिया। देखने से ऐसा मालूम होता था कि हिमालय पहाड़ पर से अभी-अभी कोई योगिराज उतरा आ रहा है। विजयसिंह ने भी वही वेश धारण किया। दोनों ने एक दूसरे को देखा और दोनों खिल-खिला पड़े।

"जय सीताराम !" नाथूसिंह ने कहा। "जय सीताराम !" विजयसिंह ने जवाब दिया।

"यह जय सीताराम सब के लिए अच्छा है। इसके साथ-साथ दो-एक और वाक्य याद कर लो।" विजयसिंह ने कहा।

"अलख निरञ्जन ! बम शङ्कर-काँटा लगे न कङ्कर !" नाथूसिंह ने नारा लगाया।

नाथूसिंह के भोलेपन को देख कर विजयसिंह खूब हँसा। मुँह से निकल पड़ने वाले शब्दों को छोड़ कर नाथूसिंह को उनके अर्थ, भाव और उनकी पवित्रता आदि बातों से कोई सरोकार नहीं था।

आगे-आगे नाथूसिंह चला, उसके पीछे-पीछे विजयसिंह चलने लगा। दोनों जङ्गल पार कर के सीधे नर्मदा नदी के किनारे पर आ गए। वहाँ मल्लाहों में बड़ा भारी कोलाहल मचा हुआ था।

"पिछली रात को किसी ने मेरी नाव उड़ा ली। उसका अब तक कोई पता नहीं लगा। उस बदमाश का अगर पता चलता तो खड़े-खड़े उसके प्राण खींच लेता !" एक नाव वाले ने कहा।

उसके चारों ओर जो लोग जमा थे इसी भाव में भरे थे। यह देख कर

विजयसिंह के होश उड़ गए और वह सोचने लगा कि भाग्य का मारा अगर कहीं यह हमें पहचान ले तो जुल्म ही हो जाएगा।

"जय सीताराम !" कहता हुआ नाथूसिंह उस भीड़ के पास पहुँचा और बोला-"बच्चो ! क्या गोलमाल हो रहा है यह सब ?"

यह सुनते ही नाविक गण उन दोनों सन्यासियों के चारों ओर जमा हो गए। विजयसिंह का दिल धड़क ही रहा था, अब यह शङ्का हुई कि अगर कहीं भूल से भी नाथूसिंह के मुँह से इसका भेद खुल गया, तब क्या होगा ? लेकिन इतनी

दूर तक आ जाने पर वह कर ही क्या सकता था?

"पिछली रात के तूफान में किसी ने हमारी नावें उड़ा लीं। वे नावें अभी कहाँ हैं, और उन्हें चुरा ले जाने वाला कौन है ? जरा ध्यान करके हमें बताने की कृपा करें, महाराज ! आप की इस दया को हम कभी नहीं भूलेंगे।" नाविकों ने प्रार्थना की।

"इस छोटी-सी बात के लिए गिड़गिड़ाते क्यों हो बच्चों !" नाथूसिंह ने कहा। फिर नर्मदा नदी की ओर इशारा करते उसने कहा- "तुम्हारी नावे सब नर्मदा नदी के पेट में पड़ी हैं-- वहाँ ! उन्हें चुराने वाले-- देखो उस मकान में रहते हैं, समझ गए ?"

यह सुनते ही वहाँ एक भी ऐसा मल्लाह नहीं था, जो गुस्से से न जल उठा हो। "चलो चलो! उन चोरों की खबर ली जाए। उन दुष्टों ने हमारा पेट काटा है। उनकी साँस बन्द कर देनी चाहिए। कहते हुए, जिस के हाथ में जो हथियार लगा, लेकर सब तैयार हो गए।"

विजयसिंह यह सब बड़ी गम्भीर दृष्टि से देख रहा था। मन-ही-मन नाथूसिंह की चातुरी पर खुश भी होता था और डरता भी था कि कहीं भूल से वह बात खोल न दे। नाथूसिंह ने उन नाविकों को उत्साहित किया- "बच्चों! यह जल्दी बाजी का काम नहीं। हम दोनों को पहले उस पार उतार दो। देवलपुर के उस मकान में भोज करने वाले सामन्तों को हम देख-सुन आते हैं। फिर तुम लोग उनसे बदला ले लेना।"

"तो महाराज! आप लोग फिर कब लौटेंगे ?" आतुर होकर मल्लाहों ने पूछा।

"कब क्या ? अभी ही आए जाते हैं। अन्यायियों के हाथ से सताए हुए तुम लोगों को न्याय दिलवाना ही हमारा काम है।

इस लिए पहले हम दोनों को नदी पार उतार दो। उस मकान से नदी पार कर जाने वाले किसी को भी हमारे आने के पहले निकलने नहीं देना। यहीं पर उसे बाँध कर रखना।" नाथूसिंह ने उन्हें यह आदेश दिया।

सन्यासों की यह बात सुन कर मल्लाह खुशी से भर गए। उन लोगों ने समझा कि हमारी रक्षा के लिए ही इन दोनों योगियों को भगवान ने यहाँ भेज दिया है। फौरन एक नाव पर दोनों साधुओं को चढ़ा कर वे उस पार ले गए।

भीमसिंह के उस मकान के पास ही नाव आकर लगी। उस समय वह मकान धूप धाम से गूँज रहा था। सैकड़ों आदमी जमा थे। घर के भीतर बधावे के बाजे बज रहे थे।

विजय ने कहा-"शादी की तैयारी हो रही है। जबरदस्ती करुणा को किसी के गले बाँधने जा रहे हैं ये लोग।"

उसकी बातों की ओर ध्यान दिए बिना "जय सीताराम !" कहता हुआ नाथूसिंह भीड़ में मिल गया और सीधे मकान की ओर चला। विजयसिंह भी उसके पीछे-पीछे "जय सीताराम !" कहता चल पड़ा।

विजयसिंह का सन्देह सच निकला ! घर में इधर-उधर घूमने वाले दास-दासियों से और वहाँ जमा हुए लोगों की बातों से

नाथूसिंह ने कमण्डल उठा कर गम्भीर स्वर में कहा-"बच्चों ! तुम्हारा सन्देह क्या है ?" विजयवर्मा उसके पास ही खड़ा चुपचाप यह सब देख रहा था।

"क्या कबन्धवर्मा से करुणा का विवाह सुकुशल हो जाएगा?" उन्होंने सवाल किया।

"ऐसा सन्देह तुम्हें क्यों हो रहा है ?" नाथूसिंह ने भवे उठा, होठ सिकोड़कर, पूछा।

"आप लोग तीनों काल की बात जानने वाले महात्मा हैं। सब बातें आप को मालूम ही होंगी। मगर आप चण्डीदास के दल में तो नहीं हैं न ?" एक ने कहा।

यह सुनते ही विजयसिंह का दिल धड़क उठा। नाथूसिंह ने बे-परवाही से कहा-

"बच्चो ! तुम जो कह रहे हो, वह हम सब से कोई छिपी बात नहीं है। द्रोही और डाकुओं के सरदार, उस चण्डीदास के साथ हमको मिलाना बड़ा भारी अपराध है। इसके लिए हम तुम्हें शाप दे देते। लेकिन यह तुम्हारा पहला अपराध है, इसलिए क्षमा कर देते हैं।" आँखें फिराते हुए नाथूसिंह ने कहा।

उसे पता चल गया कि यह करुणा का ही जबरदस्ती विवाह होने जा रहा है। लेकिन दूल्हे का कहीं पता नहीं लग रहा था।

विजयसिंह के दिल को काँटे की तरह चुभने वाली यह बात भी साफ हो गई। रङ्ग-बिरङ्गे कपड़े पहने हुए, बेशकीमत गहने-जेबर लादे हुए, दो-तीन आदमी एक बगल में बैठ कर कुछ बातें कर रहे थे। "जय सीतारम!" कह कर नाथूसिंह उनके पास आ खड़ा हुआ।

"ओह हो ! ये तो कोई साधु जान पड़ते हैं। शायद यह हमारी शङ्काओं का समाधान कर दें। पृछ देखो तो भला !" वे आपस में कहने लगे।

नाथूसिंह की बात सुन कर वे तीनों थरथर काँपने लग गए। "क्षमा कीजिए महाराज !" कहते हुए तीनों आदमी साधुओं के पैरों पर गिर पड़े!

"उठो! उठो ! पागल बच्चे। हमने तुमको माफ कर दिया।" नाथूसिंह ने कहा। "साठ साल तक हिमालय की गुफाओं में रहकर तुम मूर्खों की गालियों सुनने के लिए हमने तपस्या नहीं की थी। जाओ, हमने तुम्हारी बात भुला दी। करुणा से कबन्धवर्मा का विवाह सुकुशल हो जाएगा।" कहता हुआ नाथूसिंह वहाँ से चल पड़ा।

विजयसिंह को बेहद गुस्सा आया। कन्या के बारे में अभी-अभी कुछ मालूम हुआ था। "पचास साल के उस बूढ़े कर्मा के साथ करुणा की शादी ! भीमसिंह के इस जाल में पड़ी हुई करुणा की किसी न किसी तरह बचाना ही होगा।" विजयसिंह ने सोचा। नाथूसिंह यों ही "जय सीताराम।" कहता हुआ सारे मकान में घूम रहा था। सन्यासी के वेश में घूमने बाले इन साधुओं को किसी सिपाही ने नहीं रोका। लौकिक सुखों को न चाहने वाले साधुओं को

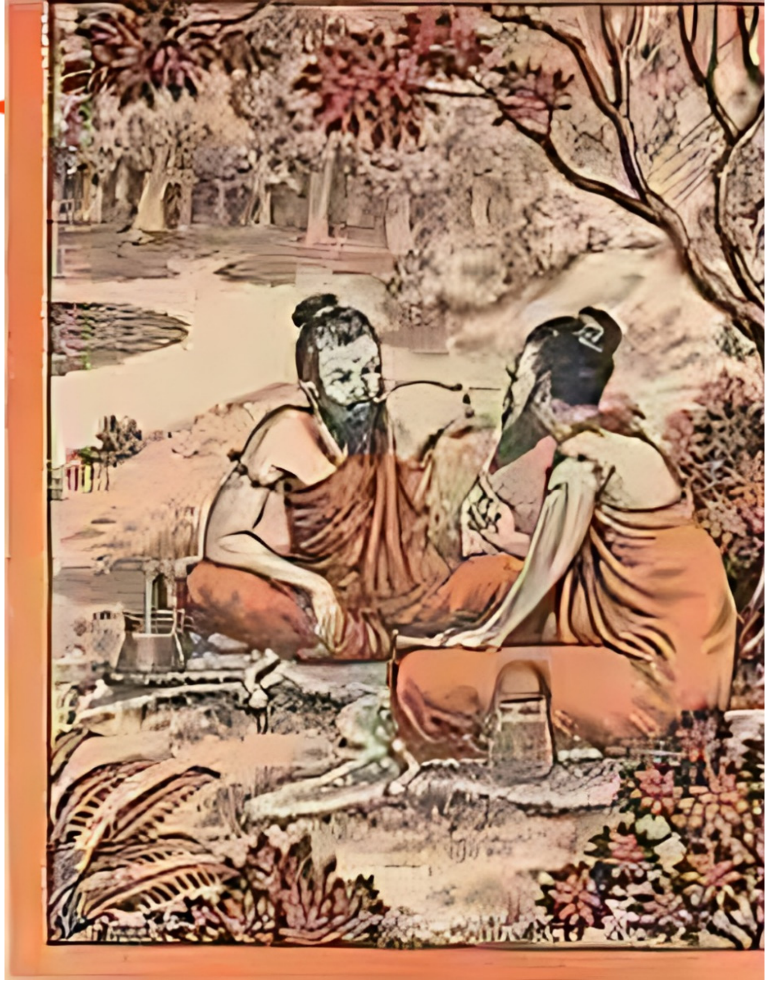

देख कर किसी को सन्देह ही क्या हो सकता था ?

कुछ देर यों घूमने के बाद विजयवसिंह नाथूसिंह को एक और ले गया। जहाँ आदमियों की भीड़ न थी, वहाँ जाकर वे दोनों एकान्त में बैठ गए। "अब क्या करना चाहिए?" इस पर दोनों विचार करने लगे।

"इस विवाह को किसी न किसी तरह रोकना ही होगा। इसलिए फौरन हम लोग धर्मशाला लौट चलें और वहाँ से कुछ लोगों को साथ ले आयें!" विजयसिंह ने कहा।

"यह क्या कहते हो ? इस से तो कुछ फायदा नहीं। अभी आधे पण्टे में बारात जङ्गल वाले मन्दिर में जाएगी। विवाह मन्दिर में ही होगा। अपने आदमियों को बुलाने का समय अब नहीं रहा !" नाथूसिंह ने कहा। "तो क्या करुणा की शादी इस बूढ़े के साथ हो ही जाएगी?" विजयसिंह ने गुस्से से पूछा।

नाथूसिंह हँस पड़ा। उसके बाद दूर की दीवार से सट कर खड़े हुए एक आदमी की ओर उसने इशारा किया। विजयवर्मा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। यों दीवार से सट कर खड़ा हुआ जो विवाह की तैयारी देख रहा था, वह चण्डीदास का आदमी था। विजयसिंह ने अपने चारों ओर देखा, फिर "जय सीताराम !" कहता हुआ उस आदमी के पास पहुँच गया। फिर झुक कर उसकी हस्त रेखा देखने के बहाने से धीरे-धीरे बोला-"आधे घण्टे में बारात जङ्गल के मन्दिर में पहुँच जाएगी। समय नहीं है, यह बात फौरन चाकर चण्डीदास से कहो।"

उसने अचम्भे में आकर पूछा-"आप कौन हैं?"

"मुझे पहचानते नहीं ? जाओ, अच्छा ही है ! पहले जल्दी चण्डीदास के पास दौड जाओ।" विजयसिंह ने कहा। यह सुन कर चण्डीदास का आदमी वहाँ से जल्दी-जल्दी चला गया।

कुछ देर के बाद बस बारात जङ्गल वाले मन्दिर की ओर रवाना हुई। शादी की शहनाइयाँ, घरवार के लोग, देखने वालों की भीड़--एक हो-हल्ला मचा हुआ था। विजयसिंह और नाथूसिंह भी उस भीड़ में मिल गए और मन्दिर की और चलने लगे।

[ अभी और है]

पुराने जमाने में शूर पद्मनाभन नामक एक राक्षस रहता था। वह बड़ा बलवान और जालिम था। उसके जुल्मों को न सहन कर चौदहों लोक थर-थर काँपने लग गए। स्वर्ग के देवता भी काँप उठे थे।

सिर्फ देवता ही नहीं, उस राक्षस के सामने देवेन्द्र को भी सिर झुका कर खिसक जाने की नौबत आ गई। इसलिए देवेन्द्र सीधे पृथ्वी पर उतर आए और एक जङ्गल मैं बाँस के पेड़ के रूप में पैदा हुए। कुछ दिनों के बाद गरमी का मौसम आया। जङ्गल के सभी पेड़-पौधे सूख गए। लेकिन देवता का अंश होने के कारण सिर्फ वह बाँस ही हरा-भरा रह गया। यह देख कर देवेन्द्र ने सोचा-"सभी पेड़ पौधे झुलस गए। सिर्फ मैं ही एक हरा-भरा रह गया हूँ। क्या यह अनुचित नहीं है ? इससे मेरी कलई बड़ी आसानी से खुल जाएगी। अभी अगर मैं अपने प्रभाव से गङ्गा को धरती पर ले आऊँ तो मेरा भेद भी न खुले और इस तरह भगवान की आराधना करने का मौका भी मिल जाए।"

इस प्रकार निश्चय करके देवेन्द्र ने गणेश की प्रार्थना की। प्रार्थना से प्रसन्न होकर गणेश प्रत्यक्ष हुए। देवेन्द्र ने उनसे अपनी इच्छा कह सुनाई। गणेश ने इन्द्र की इच्छा पूरी करनी चाही और ध्यान घर कर देखा तो अगस्त्य के कमण्डल में ही उन्हें पानी दीख पड़ा।

फौरन गणेश ने कौए का रूप धारण किया और वे अगस्त्य के आश्रम को उड़ चले। वहाँ जाकर देखा कि अगस्त्य मुनि

सीताराम चतुर्वेदी

तपस्या में लीन हैं। कौए के वेश में गणेश चुप-चाप कमण्डल के पास पहुँच गए और उसमें चोञ्च डालकर भाग खड़े हुए।

तब अगस्त्य के कमण्डल का वह जल धारा रूप में भू-लोक की ओर वह चला। बहता बहता वह जल उस जङ्गल में पहुँचा, जहाँ देवेन्द्र बाँस के पेड़ के रूप में खड़े थे, और उसे भी सींच दिया।

कुछ देर के बाद अगस्त्य ने अपने कमण्डल की ओर देखा तो उसमें एक बून्द भी पानी नहीं था। नज़र उठा कर देखा तो एक कौआ उड़ता हुआ नज़र आया। ऋषि ने उसका पीछा किया, लेकिन चौदहों लोक दौड़ने पर भी वह उनके हाथ नहीं लगा।

आखिर महर्षि को दिव्य दृष्टि से देखने पर मालूम हुआ कि वह साधारण कौआ नहीं है। तब उन्हें सभी बात मालूम हुई।

अगस्त्य गणेश की ओर मुड़ कर बोले-"बिघ्नहारी देव! तुम यों क्यों भागे-भागे फिरते हो ? तुमने लोक मङ्गल के लिए जो यह काम किया है, उसका मैं पूर्ण रूप से समर्थन करता हूँ। पर मेरे पास तो पूजा-अर्चा के लिए एक बुन्द भी पानी नहीं रह गया, यह क्यों ?" यह सुनते ही कौए के वेश धारी गणेश ने अपनी चोञ्च से पानी भर कर अगस्त्य के कमण्डल में डाल दिया।

गणेश के द्वारा अगस्त्य के कमण्डल से चुरा कर लाया हुआ, वही जल भूमि पर गिरा और कावेरी नदी के रूप में बदल गया।

उसके बाद 'सुब्रमण्यमस्वामी' पैदा हुए और उस लोक कण्टक 'शूरपद्मनामन' राक्षस का उन्होंने नाश किया। इसी लिए अब भी जब 'सुब्रमण्यमस्वामी' का उत्सव होता है तो आज भी उस 'शूरपद्मनाभन' की कथा कही सुनी जाती है।

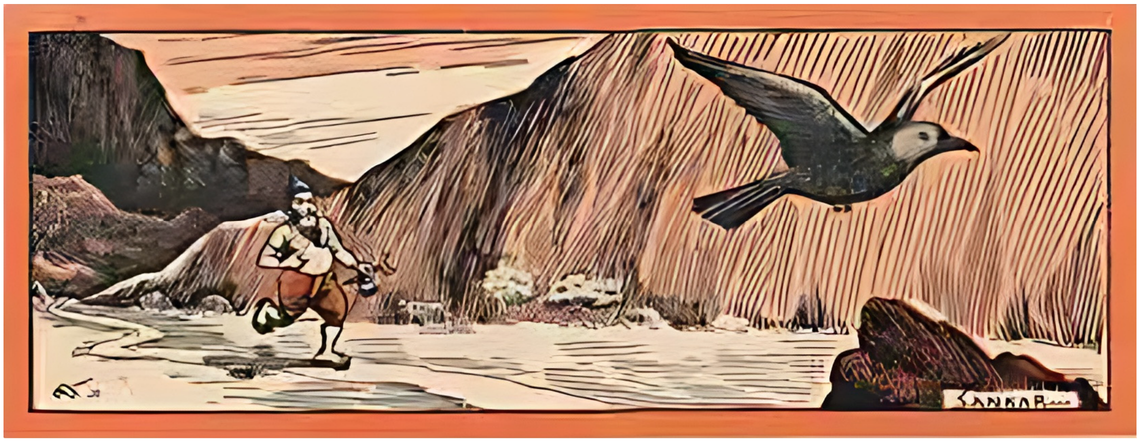

अरावली के पहाड़ों मे अण्डेया नाम का एक जङ्गल है। उस जङ्गल में एक पुरवा था। उस पुरवे के पास जवारी के खेत में मचान के ऊपर बैठी एक अठारह साल की लड़की चिड़ियों को उड़ा रही थी।

अचानक चिल्लाते और भागते हुए आदमियों का हो-हल्ला सुन पड़ा। "क्या हो रहा है ?" सोचती हुई वह लड़की मचान पर खड़ी होकर देखने लगी। देखते-देखते एक बड़ा जङ्गली सूअर जान बचाने के लिए आकर उसके घने जवार के खेत में घुस गया। वह उसके छिपने के लिए अच्छी जगह थी। सूअर को खदेड़ते हुए आने वाले और उनके पीछे-पीछे आने वाला राजकुमार सब उस खेत के पास आकर खड़े हो गए और सोचने लग गए-"अब सूअर को कैसे निकाला जाय?"

यह देख कर मचान पर से बह लड़की बोली-"क्या सूअर को खोज रहे हो ?" "हाँ" उन लोगों ने कहा। यह सुन कर बाँस के एक पैने फट्ठे को लेकर उस लड़की ने इस अन्दाज़ से खींच कर फेंका कि वह सूअर की पसली में जाकर लगा। सूअर चीखा और छटपटा कर ढेर हो गया। इसके बाद वह लड़की मचान से उतरी, सुअर की पूँछ पकड़ कर घसीटती हुई आई, और उसे राजकुमार के सामने पटक दिया। उसके साहस और उसकी शक्ति पर रीझ कर राजकुमार अपने गले से मोतियों की माला उतार कर उस लड़की को देने चला।

इस पर झिझकती हुई वह बोली -"मुझे यह हार क्यों महाराज ? मैने कौन-सा ऐसा बड़ा काम किया है ?" यह कहती

वह वहाँ से चली गई और मचान पर चढ़ कर पहले की तरह चिड़ियाँ उड़ाने लगी। राजकुमार और उनके लोग कोई शिकार न कर सके थे और उसका पीछा करते-करते

थक गए थे। इसलिए पास ही बहते हुए एक सोते के किनारे आराम करने के लिए सब बैठ गए। इतने में एक पत्थर कहीं से आकर राजकुमार के घोड़े के पैर में खट से लगा। "किसने यह शरारत की ?" कह कर लोग चारों ओर देखने लगे। तो दिखाई पड़ी मचान पर वह लड़की जो खड़ी गुलेल से चिड़ियाँ उड़ा रही थी। यह देख कर राज-परिवार का एक आदमी दौड़ा हुआ आया और कहने लगा-"अरी! तूने बहुत बड़ा अपराध कर दिया है। कौन- कहाँ है--यह देखे बगैर तुम गुलेल चलाती रहती हो।" यह सुन कर लड़की फौरन मचान से उतार पड़ी और जवार की कुछ बालें तोड़ कर राजकुमार के सामने आ खड़ी हुई-"मेरी गलती माफ कर दीजिए और यह मञ्जूर कीजिए।" गुस्सा किए बगैर राजकुमार ने कहा-"कोई बात नहीं।"

राजकुमार को तो गुस्सा नहीं आया। लेकिन उनके लोगों के मन में लड़की का यह काम खटक गया। घर जाने के लिए राजकुमार उठा और अपने सब लोगों के साथ घोड़े पर चढ़ कर रवाना हुआ। इतने में वह लड़की माथे पर दूध का घड़ा रखे, दोनों बगल में दो मेमनो को लिए, उनके सामने से जाने लगी। राजकुमार के परिवार वालों में से एक को उसे छेड़ने की बात सूझी। उसने लगाम को ढील देकर घोड़े के एँड़ लगाई और लड़की पर उसे कुदा दिया। ऐसा करने में उसका मतलब यह था कि वह घबरा कर इधर-उधर भागेगी और उसके माथे पर से दूध का घड़ा गिर जाएगा, और लोग यह

देख कर हँसेंगे। लेकिन वह लड़की बड़ी होशियार थी। जरा भी घबराए बिना उसने घोड़े के सामने अपने एक मेमने को रख दिया। इस से घोड़ा भड़क उठा और सवार को गिरा दिया। लड़की जरा भी विचलित नहीं हुई, उसके घड़े से दूध की एक बन्द भी नहीं गिरी, और वह अनजान सी बनी मेमनों को हाँकती अपनी राह चली गई।

राजकुमार यह तमाशा देख रहा था। उसने उस लड़की को बुला कर पूछा-"कौन हो तुम?"

"मेरा नाम कुरुनदेवी है।" उसने कहा।

"तुम्हारी जाति क्या है ?"

"राजपूत"

"तुम्हारा घर कहाँ है ?"

"दीख पड़ने वाले उस पुरवे में।"

"अपने बाप को एक बार मेरे पास आने को कहोगी ?" राजकुमार ने कहा।

"बहुत अच्छा।" कह कर वह अपनी राह चली गई। राजकुमार अपने परिजनों के साथ घर पहुँचा। दूसरे दिन राजकुमार के सामने एक बूढ़ा आकर खड़ा हुआ और बोला-"क्या

बाबू, मेरी लड़की से खबर भेज कर आपने ही मुझे बुलाया है ?"

"हाँ, कुरुनदेवी के पिता आप ही हैं ?" राजकुमार ने पूछा। उस बूढे के कपड़े फटे-चिटे और मैले कुचले थे। यह देख कर ही राजकुमार समझ गया कि यह बहुत गरीब आदमी है। लेकिन वह मूछों पर ताब देता राजकुमार की बगल में ही बैठ गया और बराबर वालों की तरह बातें करने लगा। राज परिवार को इस से बड़ा आश्चर्य हुआ। लेकिन राजकुमार उस बूढ़े के साहस पर खुश हुआ और बोला-"क्या आप अपनी बेटी को मेरी रानी बनाना मञ्जूर करेंगे ?"

राजकुमार की वह बात सुनते ही राज-परिवार के सब लोग विस्मय में पड़ गए और आपस में कहने लगे- "हमारे राजकुमार का व्याह इस दरीद्र की बेटी से होगा ?" उन लोगों ने सोचा कि अब बूढ़ा तो "इस से बढ़कर और क्या चाहिए ?" कह कर उछल पड़ेगा। लेकिन बूढ़ा चुप-चाप वैसे ही बैठा रह गया।

राजकुमार ने मुस्कुराते हुए कहा-"मैं मेवाड़ का राजकुमार हूँ, मेरा नाम है युवराज हीरासिंह।" इस पर वह बूढ़ा बोला-"मालूम है, इसीलिए सङ्कोच हो रहा है।" युवराज ने आश्चर्य से पूछा "सङ्कोच क्यों?"

बूढ़े ने उसका यों जवाब दिया- "हमारी सारी सम्पति है शौर्य और पौरूष। इस के सिवा और कुछ भी नहीं।" यह सुन कर राजकुमार बोला-"उस में वह शौर्य सम्पत्ति देख कर ही मैने उसे अपनी रानी बनाना चाहा है।"

"तो फिर मुझे कोई आपत्ति नहीं। लड़की से पूछ कर आपको खबर भेज दूँगा।"

उस दिन जिस बहादुर ने अपना घोड़ा कुदा कर करुनदेवी को छेड़ा था और जो घोड़े से गिर कर खुद हँसी का पात्र बन गया था वह अपने पास बैठे एक साथी से बोला-"इस बूढ़े का गर्व तो देखो !" उसके साथी ने धीरे से उसे समझाया-"आहिस्ता बोलो, राजकुमार ने सुना तो हमारे प्राणों पर आ पड़ेगी। क्या समझते हो ? यह महाराज का समधी होने जा रहा है।"

हीरासिंह से करुनदेवी की शादी बड़ी धूम-धाम के साथ हो गई। उस वीर रानी के गर्भ से ही बाद में जाकर इतिहास प्रसिद्ध वीर शिरोमणि राणा अमरसिंह का जन्म हुआ।

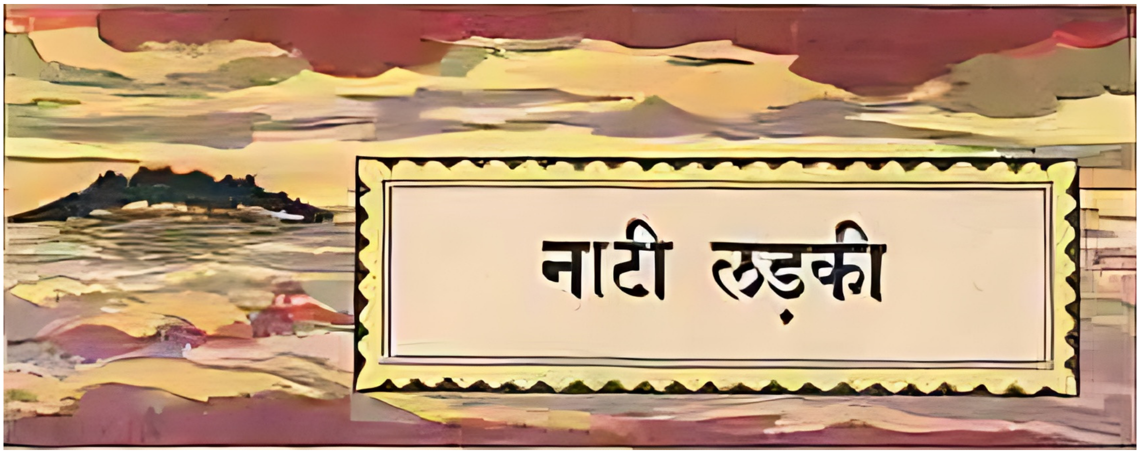

# नाटी लड़की

एक छोटा टापू था। वहाँ के रहने वाले सब नाटे ही नाटे थे। वे लोग जमीन से एक बालिश्त ही ऊँचे थे। लेकिन चतुराई में वे अपना सानी नहीं रखते थे। उन्हें जानवरों और पक्षियों की बोलियाँ भी मालूम थी। जन्तर-मन्तर में भी उनका गहरा विश्वास था। उस द्वीप वाले बहुत काल से शान्ति-पूर्वक जीवन बिताते आ रहे थे। कुछ दिनों के बाद उन पर बिपत्ति आ पड़ी। दुनियाँ के दूसरे लोग उस द्वीप को देखने आए। उन्हें देख कर ये लोग बहुत डर गए। फौरन उन्होंने यह तय किया कि जहाँ कोई आदमी नजर में न पड़े हम वहाँ चले जाएँ।

यों वे लोग जब माल असबाब ठीक करके गाय बैलों के साथ सपरिवार तैयार हुए, तो ब्रह्मचारी 'बेन्नय्या' की बात याद आ गईं। सब लोग चल पड़े थे। लेकिन बेन्नय्या वहाँ से न टसकने की भीष्मप्रतिज्ञा करके बैठा रह गया।

"बेन्नय्या बाबू ! अकेले रह जाओगे, वे स्वार्थी और दुष्ट लोग तुम्हारी बलि दे देंगे।" उसके बन्धू बान्धव और दोस्त मित्रों ने उसे खूब समझाया-बुझाया। उसको रोज खाना खिलाने वाली उसकी दादी ने भी उस से बहुत कुछ कहा-सुना, लेकिन बेन्नय्या ने किसी की नहीं सुनी और दृढ़ता से वह बोला-"चाहे, जो कुछ हो ! अपनी बागबाड़ी छोड़ मैं कहीं नहीं जाऊँगा। अगर मेरी जवान ठीक रही, तो कोई मेरा क्या बिगाड़ सकेगा?"

इस तरह जब उसके दोस्त मित्र जाने लगे, तो एक-एक कर बेन्नय्या के पास आए और विदा लेने लगे-"तो हम जाते हैं।"

उसके जवाब में वह कहता-"अच्छा ! बहुत अच्छा !"

उस द्वीप में एक आदमी भी नहीं रह गया। सब के सब चले गए। यह देख कर बेन्नय्या को कुछ भी नहीं सूझा। एक बड़ी शून्यता उसके सामने खड़ी हो गई। जब उसे कुछ न सूझा तो वह बाग में जाकर काम करने लगा और साँझ होते घर पर आया। वह सोच रहा था कि रोज की तरह घर जाने पर उसे खाना तैयार मिलेगा।

मगर घर आकर देखता है, तो भोजन नदारद । खाली बर्तन पड़े ढन ढना रहे थे।

उसकी समझ में कुछ न आया। सोने के कमरे मैं गया--बिछौने सब अस्त-व्यस्त पड़े हुए थे। इस तरह काम नहीं चलेगा- -यह सोच कर उसने रसोई बनानी चाही और चावल धो कर चूल्हे पर चढ़ा दिए। भोजन तैयार होने में काफी देर लगेगी, अभी आए जाता हूँ, यह सोच कर वह फिर से बाग में चला गया। जब तक वह लौटा, चूल्हे पर का भात जल भुन कर खाक हो गया।

बेन्नय्या को भूख बर्दाशत नहीं हुई। उसकी जान निकलने लगी। थोड़ा सा पानी पीकर वह लेट गया। उसने मन-ही-मन सोचा-"ऐसे तो काम चलने का नहीं, कल से देखो। मैं क्या करता हूँ!" सोचा तो, पर रसोई नहीं हो सकी। दूसरे दिन से वह फल-मूल खा दिन काटने लगा। एक बार खाना बनाने चला, तो धन धना कर हण्डिया फूट गई। इन सब बातों से बेन्नय्या ऊब गया। अध-पेट रह कर वह भला बाग-बाड़ी का काम कैसे करता ?

एक दिन वह उदास मात्र से बैठा था, कि सामने के उगे पौधे में दो तारे चमकते दीख पड़े। वह विस्मित हो उठा। गौर से देखने पर उसे मालूम हुआ कि गिलहरी की

आँखें चमक रही हैं। गिलहरी बाहर आई और बोली-"भई बेन्नय्या! उदास क्यों हो रहे हो?" इस पर बेन्नय्या ने जवाब दिया-"क्या कहूँ गिलहरी रानी ! जब मेरे लोग मेरे सामने थे, मैंने उनकी कीमत नहीं जानी थी। अब जाना के अपने लाग क्या होते हैं!

"बेन्नय्या बाबू ! कब तक इस तरह रहोगे ? कहीं से एक सुन्दर लड़की ले आकर गले में बाँध लो।" गिलहरी ने कहा।

गिलहरी ने जब यह बात कही, तो बेन्नय्या को मन-ही-मन अपने लागों की बातें याद आ गई-"अरे बेन्नय्या ! तू अकेला कब तक रहेगा यहाँ ? घर बारी बन जाए तो हम देखेंगे।" उसने उनसे कहा था-"मर जाऊँगा, पर ब्याह नहीं करूँगा। ब्याह एक बड़ी बला है।"

बेन्नय्या जब इस तरह पहली बातें याद कर रहा था, तो गिलहरी का बेटा फुदकता हुआ वहाँ आया और कहने लगा-" माँ ! माँ ! पेड़ के नीचे कोई औरत गिर पड़ी है। जल्दी चल कर देखो तो सही कि कौन है बह।

तीनों वहाँ से चल पड़े। वहाँ फूलों के पौधों के नीचे एक छोटी बालिका पड़ी हुई थी। उसका मुँह बेले के फूल के समान सफेद था। उसके कोमल गाल गुलाब के फूल की तरह खिल रहे थे।

गिलहरी बोली-"जाने बेचारी क्यों पड़ी हुई है ! इसे यहाँ कैसे छोड़ दिया जाय !"

गिलहरी का बेटा उस लड़की को जगाने चला, लेकिन उससे कुछ न हो सका। तब बेन्नय्या ने जाकर उसे गोद में उठा लिया। फिर सब मिल कर बेन्नय्या के घर आए और उसे चटाई पर बिठा दिया। गिलहरी ने चिन्ता से कहा-"इस लड़की में प्राण नहीं मालूम होते।" उसकी साँस चलती है या नहीं-यह देखने के लिए बेन्नय्या ने उसकी नाक पर उँगली रखी। आखिर गिलहरी बोली-"बेन्नय्या बाबू! यह सचमुच की लड़की नहीं है। आदमी की मूरत है। कोई भूल से उसे यहाँ छोड़ गया है।"

बेन्नय्या ने उस सुन्दर मूर्ति की जाँच-पड़ताल शुरू कर दी। लजाते-लजाते उसने उसके गाल मल दिए, रेशम की तरह मुलायम उसके कान्तिमान सिर को सहलाया, फिर प्रश्न किया-"लड़की, तेरा नाम क्या है ?" अखिर चिल्ला उठा-"अरे! यह तो मूरत है।"

दीन-नेत्रों से देखते हुए उसने कहा-"गिलहरी ! यन्त्र-मन्त्र द्वारा इस मूरत को आदमी बना दे, ऐसा कोई महात्मा है क्या ? सच-मुच अगर यह मूरत आदमी बन जाय तो कितने प्यार से इसे 'रानी' कह कर पुकारूँ!" गिलहरी ने खुश होकर कहा-"तुम सच कह रहे हो। बेन्नय्या बाबू ! लेकिन जरा ठहरो, मैं सोच कर बताती हूँ।" फिर कुछ सोच कर उसने कहा-"मेरे साथ आओ !" यों दोनों चले जा रहे थे कि.साँझ हो गई। उस अँधेरे में एक बड़ा डरावना सिर उनके सामने आया और बोला-"अरे ठहर जाओ ! अभी एक बड़ा तूफान आने वाला है। देखो, मेरे पाँव में ठण्डी हवा लग रही है। जरूर आँधी-पानी आएगा।

यह सुन कर बेन्नय्या गिड़गिड़ा कर कहने लगा-"अजी! फूलों की क्यारी में हमें एक सुन्दर मूरत मिली है। कृपा करके यह बताओ तो सही कि कोई उसे आदमी बना सकता है? तुमको बहुत पुण्य होगा।"

यह सुन कर यह डरावना सिर कहने लगा-"तुम सीधे यहाँ से चार योजन दूर पर रहने वले गूनी बाबू के पास चले जाओ। वह तुम्हारी इच्छा पूरी कर देगा।"

गिलहरी और बेन्नय्या दोनों मूरत को उठाकर चल पड़े और पेड़ के खोखले में रहने वाले गूनी बाबू के पास जा पहुँचे। बेन्नय्या ने मूरत की बात उसे बनाई और उसमें प्राण डाल देने की प्रार्थना की।

यह सुन कर गूनी बाबू बोले-"अरे, यह क्या? तुम लोग इस मूरत में जान डालने की बात कह रहे हो ! तुम्हें मालूम नहीं, यहाँ से दस योजन की दूरी पर कीका-वन में एक बड़ा भूत रहता है! वह भूत एक लड़की को पाल रहा है। यह मूरत उस लड़की का खिलौना है-समझे ? अगर मूत को यह बात मालूम हुई, तो तुम लोगों को कच्चा ही चबा जाएगा। जहाँ से इसे उठा लाए हो, रख आओ इसे वहीं।"

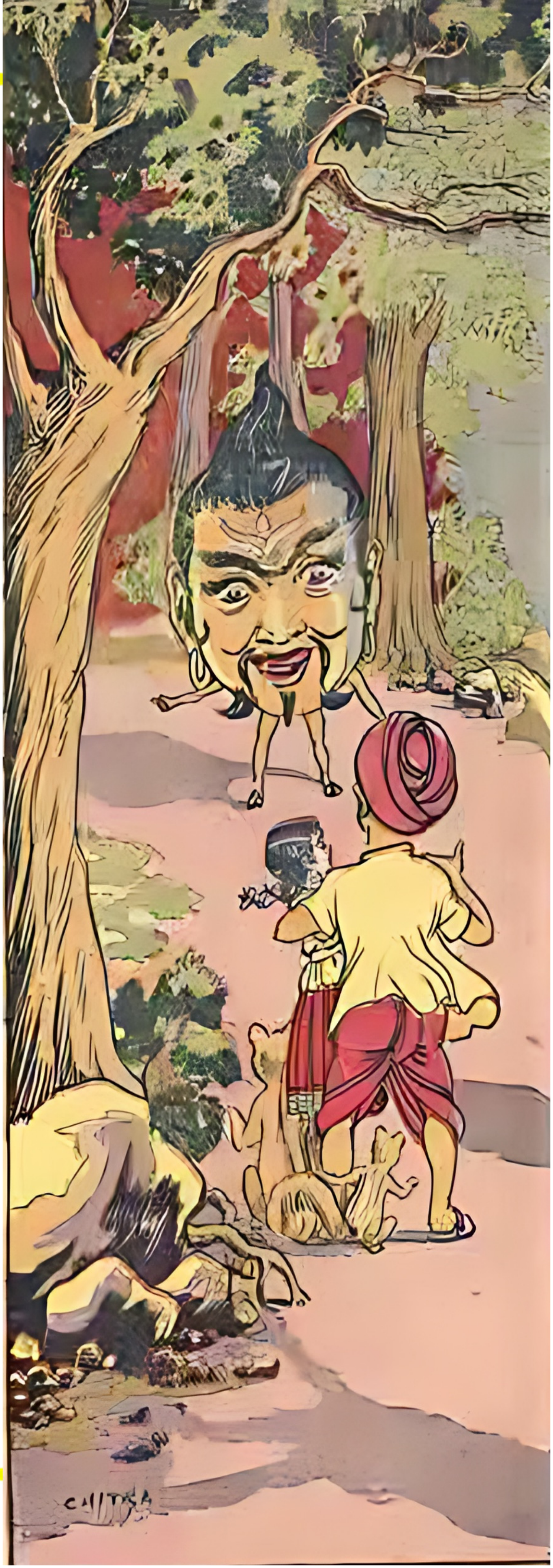

"किसी की भी रहे, मैं यह मूरत छोड़ने बाला नहीं, गूनी बाबू! आप इसमें प्राण डालने का उराय बता दे मुझे।" बेन्नय्या ने कहा।

तब गुनी बाबू बोले-"मूरत में जान डालने का गुर भी उसी भूत को मालूम है।"

"उसके लिए वह भूत क्या लेगा ?" बेन्नय्या ने फिर पूछा।

"उसे धन की क्या कमी है? हजार कहने-सुनने पर भी वह कुछ नहीं लेगा। ख्याल में चढ़ गया, तो भलाई कर देगा। उसके हाथ से भलाई पाने का योग भाग्य में होना चाहिए।" इतना कह कर उसने जिस अङ्गल मैं भूत रहता था, उस जङ्गल का मार्ग बता दिया।

"बहुत अच्छा!" कह कर और विदा लेकर बेन्नय्या जब जाने लगा तो गुनी बाबू ने उसे पुकारा और उसके कानों में कहा-"बाबू, तुम्हें एक भेद की बात बता देता हूँ, याद रखो, वह लड़की भूत को प्राणों के समान प्यारी है। लड़की की चिन्ता ही उसकी चिन्ता है। इसलिए अगर तुम कोई ऐसा अद्‌भुत काम करो जिससे वह लड़की खुश हो जाए, तो फिर वह भूत बड़े प्रेम से तुम्हारी इच्छा पूरी कर देगा।"

यह सुन कर बेन्नय्या हतोत्साह हो गया। गिलहरी और गिलहरी का बेटा भी बेन्नय्या की चिन्ता दूर न कर सके। कौन सा अद्‌भुत काम किया जाए, जिससे वह भूत खुश हो, इसकी चिन्ता में वह डूबा रहने लगा।

ऐसे ही समय, उस द्वीप में आने वाले कुछ नये लोग वहाँ घूम-घाम कर देखने-सुनने लगे। देख सुनकर वे बड़े प्रसन्न हुए। लेकिन इस द्वीप में कोई भी आदमी नहीं है, यह देख कर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। आखिरकार एक पेड़ के नीचे उदास बैठा बेन्नय्या उन्हें दीख पड़ा। उस की

विचित्र शकल-सूरत देख कर वे लोग अचरज में पड़ गए। बात-चीन में उन्होंने बेन्नय्या को पकड़ लिया और चिन्ता का कारण भी जान लिया। सब कुछ मालूम हो जाने पर वे लोग बोले-"अरे, इसी के लिए इतनी चिन्ता !" कहते हुए उन्होंने उसे बहुत ढाढ़स दिया। फिर उसे समुद्र-तट पर ले गए और जहाज पर ले जाकर बहुत सी अद्‌भुत चीजें उसे दिखाई।

उनमें जो चीज उसे बहुत ज्यादा अद्‌भुत मालूम हुई, बड़ी आतुरता से उसे उसने माँगा, और उन लोगों ने उसे वह चीज दे भी दी। वह चीज लेकर बेन्नय्या गिलहरी के साथ मूरत को बगल में दबा कर जल्दी-जल्दी कदम रखता सीधे भूत के घर की ओर चल पड़ा। बहुत से कष्ट झेलते हुए तीनों उस कीका-वन में पहुँचे। भूत का घर पास आया, तो दो सिर वाले दो कुत्ते उन पर टूट पड़े ! बेन्नय्या ने एक पटाखा उन पर छोड़ दिया। ऐसी आवाज उन्होंने कभी नहीं सुनी थी, इसलिए दोनों कुत्ते सिर पर पैर रख कर भाग खड़े हुए और आँखों से ओझल हो गए। आबाज को सुन कर भूत और

उसकी बेटी दोनों बाहर आए। बेन्नय्या के हाथ में मूरत देख कर दोनों का पारा चढ़ गया। उन्होंने उसे छीन लेना चाहा। लेकिन बेन्नय्या ने फुलझड़ी जला दी ! उसकी चकाचौंध में वे लोग कुछ भी नहीं देख सके। इतने में बेन्नय्या ने छुड़-छुड़ी भी छोड़ दी। वह सनसनाती आसमान की ओर उड़ी, जिसे देख कर वे लोग अचम्भे में पड़ गए। फिर बेन्नय्या ने अनार फूल जला दिया। जिससे सहसा जगमगाते हजारों फूल बरस पड़े। उन फूलों को देख कर लड़की को बेहद खुशी हुई। सिर्फ बेटी ही नहीं, वह भूत भी अत्यन्त हर्षित हुआ।

बेन्नय्या को पास बुला कर उन्होंने उससे मूरत माँगी और कहा- "तुमको जो कुछ चाहिए, माँग लो।" बेन्नय्या ने अपनी बात कह सुनाई। वह मूरत बेटी को बहुत प्यारी थी, इसलिए भूत कुछ सोच में पड़ गया।

मूत की बेटी नाटी थी। इसलिए उसको अब तक कोई लायक वर नहीं मिल सका था। आज इस बेन्नय्या को देखते ही बेटी के लायक वर मिल गया; ऐसा सोच कर भूत मन-ही-मन फूला न समाया।

उसने बेन्नय्या के साथ अपनी बेटी की शादी धूम-धाम से कर दी। फिर मूरत में जान डाल कर उसे भी दामाद को दहेज में दे दिया। सब लोग फिर द्वीप में आ गए, जहाँ बेन्नय्या रहता था।

उस द्वीप को जो लोग देखने आए थे, उन लोगों ने जाते-जाते बेन्नय्या और उस नाटी लड़की को आशीर्वाद देकर नज़र नज़राने भेंट किए।

उस दिन डर कर जो बौने भाग गए थे, धीरे-धीरे वे सब फिर लौटने लगे। बेन्नय्या अब एक घर बारी हो गया था। यह देख कर सबों को बड़ी खुशी हुई। उसकी आतिशबाजियों के खेल देख कर तो उनके अचरज की हद ही नहीं रह गई।

"मुझे एक! मुझे एक!" कहते हुए सब लोग उसे घेर कर खड़े हो गए।

"क्या है यह सब ? मुझे एक ! मुझे एक !" कितनी बार जगाऊँ तुझे ? उठ ! उठ ! तेल स्नान करना है न?" माँ की पुकार सुन कर लड़का उछल पड़ा। अब तक वह सपना देख रहा था।

उस समय महान पराक्रमी राणा प्रतापसिंह का शासन काल था। अकबर बादशाह भारत के सम्राट थे। सभी सामन्त राज्य सम्राट अधीन हो गए थे। लेकिन राणा प्रताप ही सिर नहीं झुका रहे थे। अकबर गुस्से से भर गया था। राणा अपनी टेक पर डटे रह गए। राणा प्रताप का यह स्वातन्त्र्य-प्रेम अकबर से सहन न हुआ। वह उन्हें अनेक तरह से सताने लगा। फिर भी राणा विचलित न हुए। सम्राट बिगड़ पड़ा। उसने निश्चय किया-"चाहे जिस तरह हो, राणा को वश में लाना ही होगा। सम्राट की प्रतिहिंसा से राणा के हृदय में धक-धक जलती हुई स्वतन्त्रता की ज्वाला और भी भड़क उठी। आखिर सम्राट के दबाव के कारण महाराणा को जङ्गलों में जाकर रहना पड़ा। अगर राणा अकेले होते तो उन्हें कोई चिन्ता न होती। उनकी पत्नी और दुलारे-बच्चे भी कष्ट भोग रहे थे। अब राणा के सामने यह समस्या खड़ी हुई-"महत्वाकांक्षी सम्राट के अधीन गुलामी की जिन्दगी बिताई जाय, या जङ्गलों में मटकते हुए स्वतन्त्रता की हवा में साँस ली जाए ?" उन्होंने दूसरा रास्ता ही पसन्द किया। सिर्फ राणा को ही नहीं, उनकी पत्नी सुगुणा, ग्यारह साल की पुत्री चम्पावती और चार साल के अबोध बच्चे सुन्दरसिंह को भी वहीं मार्ग पसन्द आया।

दोनों बच्चे सब कुछ भूल कर जङ्गल में खेलते रहते थे। चम्पावती फूलों की माला गूँथती और अपने छोटे भाई के गले में डाल कर खुश होती। एक दिन भूख से व्याकुल होकर वह बेचारा बच्चा रोने लगा। यह देख

अमिता कुमारी

कर चम्पावती ने कहा-"बाबू, इसके लिए ही रोते हो ?" और उसे उठाकर अन्दर ले गई।

*    *    *    *

महाराणा प्रताप और उनकी पत्नी सुगुणा मैले-कुचैले कपड़े पहने हुए उदास भाव से बैठे हुए थे। बैठे-बैठे प्रताप ने एक लम्बी साँस छोड़ी और कहा-"प्रिये! भाग्य का उलट-फेर देखा तुमने ? एक ब्राह्मण अतिथि आया था। लेकिन आज हमारे घर से वह खाली लौट गया। मेरी जिन्दगी में यह पहली घटना है। राजस्थान के मुकुटमणि और चितौड़ के राजवंश के लिए यह लज्जा की ही बात है न! यों राज-वंश की प्रतिष्ठा को धूल में मिला कर, कहो-अब मैं क्यों जीऊँ ?" ऐसा कह कर उन्होंने फिर उसाँस छोड़ी।

सुगुणा ने अपने पति के मन को बहलाने की बहुत कोशिश की, इससे उनकी कुछ सान्त्वना मिली। "लेकिन आज तक किसी बात से मुझे इतना दुख नहीं हुआ, कोई कष्ट मुझे इतना सता नहीं सका था। जिस समय रोटी के टुकड़े के लिए चिल्लाता मेरा स्वर्ण-धन उठ गया था, तब भी मैंने धैर्य नहीं छोड़ा ! लेकिन..... लेकिन .... आज एक ब्राह्मण मेरी कुटिया में आकर भूखा ही लौट गया। यह अपमान, यह वेदना, मुझ से सही नहीं जाती।" ऐसा कहते-कहते राणा प्रताप मूर्हित होकर गिर पड़े।

इतने में भाई का हाथ पकड़े चम्पावती पिता के पास आ पहुँची और बोली-"चिन्ता मत कीजिए बाबूजी। आप जो सोच रहे हैं कि वह ब्राह्मण खाली हाथ चला गया है, ऐसी बात नही। वह नहाने गया है, अभी आएगा। उसको खिला-पिला कर बिदा करने का भार मेरे ऊपर है।" राणा अचम्भे में पड़ गए। उन्होंने बड़ी

आतुरता से पूछा-"बिटया रानी, तब तो तुमने मेरी इज्जत बचा ली। बहुत अच्छा ! लेकिन समझ में नहीं आता है कि तुम उस ब्राह्मण को कैसे तृप्त करोगी।"

"पिताजी, दो रोज से मेरे हिस्से की रोटी वैसे ही रखी हुई है, वही खिला दूँगी। उनके लिए मैंने कुछ साग भी तैयार कर लिया है, अब चिन्ता किस बात की ?" उसने जवाब दिया।

महाराणा की आँखें छलछला आई।

*     *     *     *

नहा-धो कर ब्राह्मण आ गया। उनके बैठने के लिए चम्पावती ने आसन लगा रखा था। आते ही रोटी परोस दी गई। ब्राह्मण खुश होकर खाने लगा। चम्पावती ने कहा-"महाराज! हम लोग जङ्गल में रहते हैं, इसलिए और कुछ तैयार नहीं कर सके।"

"बेटी, ऐसा मत सोचो। ऐसा अमृत भोजन मैंने अपने जीवन में कभी नहीं किया था। सदा प्रसन्न रहो पुत्री।" आशीर्वाद देकर वह ब्राह्मण चला गया। यह बात पिता से कहने के लिए चम्पावती भीतर गई, लेकिन कमजोरी के कारण गिर पड़ी और मुँह से कोई बात न निकली।

राणा ने आकर देखा, सुगुणा पास ही बैठी थी। राणा के सिर में चक्कर आने लगा। उन्होंने कहा-"प्रिये ! मेहरबान बादशह ने सुलह का पैगाम भेजा है।"

इतने में बाहर कुछ पैरों की आहट हुई। राणा ने उत्साह से कहा-"शायद बादशाह के ही आदमी होंगे।" काँपते शरीर से चम्पावती सहसा उठ खड़ी हुई और भावावेश के साथ कहने लगी- "पिताजी ! बादशाह की दया आप की समझ में अब आई है? कल वह आप को बहुत बड़ा ओहदा देंगे, परसों फिर आप को गुलाम

बनाएँगे। इसी से आप को सन्तोष है? राज पुत्र का पौरुष जो धग धग जल रहा था, उसे बुझा दीजिए। हल्दीघाटी की लड़ाई में जिन लोगों ने यह नारा लगाया था-"राणा की सन्तान सिंहों की सन्तान है !" जिसे सुन कर अकबर के कान फट गए थे, आज यही राणा सिर झुका कर उसके पास जाएँगे ?" राणा प्रताप तिलमिला उठे। उन्होंने ओजस्वी स्वर में कहा-"बेटी, चम्पा ! वैसे नीच की शरण में तुम-सी वीर बेटी का यह पिता नहीं जाएगा। तुम्हारी तकलीफें देख कर ही वह बात मेरे मुँह से निकल गई थी। बेफिक्र रहो बेटी। मैं अकबर की दासता कभी नहीं कबूल करूँगा।" ऐसा कहते राणा ने देखा कि चम्पावती ने सदा के लिए आँखें मूँद ली।

इतने में बाहर से आवाज़ आई-"सत्य सत्य। हम अकबर के मातहत कभी नहीं रहेंगे।" यह सुन कर राणा विस्मित हो उठे और देखा कि वही ब्राह्मण आ रहा है।

उसने आते ही राणा का हाथ अपने हाथ में ले लिया और चम्पावती को देख कर आँसू ढालता कहने लगा- "राणा ! परम पवित्र इस फूल को मुरझाने वाला वही बादशाह हूँ। इस बेटी का नाम स्वर्ण अक्षरों में अङ्कित होगा। इस चम्पावती के सामने भगवान को साक्षी रख कर कहता हूँ, आज से हम में कोई दुश्मनी नहीं रही। अपना राज्य तुम निश्चिन्त होकर सम्हालो।" ऐसा कहते हुए उसने राणा को अपनी भुजाओं में कस लिया।

प्राचीन काल की बात है। एक देश में तीन चोर रहते थे। तीनों एक से एक बढ़े-चढ़े थे।

एक दिन तीनों चोर एक भोजन गृह में मिले। तीनों एक ही पेशेवर होने के कारण झट दोस्त बन गए। "अब कौन बड़ा कहलाए?" यह बहस छिड़गई। पहले चोर ने कहा-"मैं घोंसले में से चिड़िए के अण्डे इस चालाकी से उठा लाऊँगा कि चिड़िए को भी मालूम न हो सके।"

दूसरे ने कहा-"मैं रास्ते पर चलते हुए आदमी के पाँव में से उसके जूतों के तले भी काट ला सकता हूँ।"

अब तीसरे चोर ने कहा-"मैं अपने साथ भोजन करने वाले आदमी की थाली से, उसके जाने बिना ही उसके पकवान अपनी जेब में डाल कर ले आ सकता हूँ।"

तीनों चोर एक रोज मिले और यो सोचने लगे-"चाहे हम कितनी भी चालाकी से चोरी क्यों न करें, अगर कभी पुलिस वालों की नजरों में पड़ गए, तो वे हमें पकड़े बिना तो नहीं छोड़ेंगे। यों अगर हम पकड़े गए, तो मरने तक हमें जेल में ही रहना पड़ेगा। इसलिए अगर हम अपनी चालाकी से राजा के पास कोई नौकरी हासिल कर लें, तब फिर हमारी यह हालत न रह जाएगी।"

यह सोच कर तीनों चोर राजधानी की और रवाना हो गए।

राजधानी पहुँच कर चोर एक सराय में उतरे। राजा से मिलने के लिए खाली हाथ नहीं जा सकते थे। इसलिए उन्होंने निश्चय किया-"कल दोपहर तक कहीं से तीनों, तीन अनमोल वस्तु प्राप्त करके ले आएँ। ऐसा तय करके तीनों निकल गए।

कृष्णा कुमारी

पहला चोर राजा के बाग में घुसा। उस बाग में राजा का प्यार से पाला हुआ एक मोर था। मोर को अण्डे देते हुए देख कर वह चोर उसके अण्डे जेब में डाल कर ले आया।

राजा को मालूम हो गया कि मोर के अण्डे गायब हो गए। बाग के रखवालों पर खूब डाँट-डपट पड़ी और उन्हें हुक्म हुआ कि कल साँझ तक जहाँ से हो ले आकर वे अण्डे दें, वरना मौत के हवाले कर दिए जाएँगे।"

दूसरा चोर राजा के खास दरबार में प्रवेश कर गया ! मन्त्री लोग राजा के आने की राह देखते इधर-उधर घूम रहे थे। उनमें प्रधानमन्त्री एक मोटा-ताजा आदमी था। उसने जो जूते पहन रखे थे उनके तले काट कर वह चोर चलता बना।

राजा आकर जब सिहासन पर बैठ गया, तब एक-एक करके सब मन्त्री आगे आए और घुटनों के बल शुक कर राजा को प्रणाम किया। इस तरह जब प्रधानमन्त्री घुटनों के बल झुक कर प्रणाम करने लगा तो उसकी बगल में खड़े लोग कानाफूसी करके हँसने लगे। राजा को मालुम हो गया कि मन्त्री के पैरों के जूतों के तले गायब हैं। "मेरा अपमान करने के लिए ही मन्त्री बिना तले वाले जूते पहन कर आया है।" यह सोच राजा को बड़ा गुस्सा आया और उसने हुक्म दिया-"कल शाम तक अगर तुम अपनी इस ढिठाई की कैफियत नहीं दोगे, तो मार डाले जाओगे।"

तीसरा चो र राजा के भोजन-गृह में प्रवेश कर गया। राजा आकर भोजन करने बैठा। रसोइया राजा की थाली में परोसने के लिए लड्डू मिठाई आदि ले आया। वह चोर किसी के जाने बगैर ही पकवान

के तीन हिस्से जेब में डाल कर गायब हो गया।

राजा की भूख न मिटी, उसने कुछ और माँगा, लेकिन वहाँ और था ही क्या ? "रसोइए जमा होकर सब कुछ अपने ही पेट में ठूँसते जा रहे हैं।" यह सोच कर राजा को बेतरह गुस्सा आ गया और उसने हुक्म दिया-"कैफियत न देने पर कल साँझ तक रसोइयों को कतल कर दिया जाए।"

दूसरे दिन दोपहर को राजा दरबार में आकर बैठा। हमारे तीनों चोर भी अपनी-अपनी भेंट लेकर दरबार में हाजिर हुए। राजा बोला-"कल रख बालों की लापरवाही से मेरे बाग के मोर के अण्डे गायब हो गए। कल प्रधान मन्त्री बिना तल्ले के जूते पहन कर सभा में आए। कल ही रसोइयों ने मेरे लिए काफी पकवान नहीं बनाए। आज शाम को इन सबों को मार डालने का मैंने हुक्म दे दिया है। कल की इन सब हरकतों के लिए कोई-न-कोई कारण जरूर होगा, जो आदमी वह भेद बता सकेगा, उसे मैं बहुत इनाम दूँगा। और लोगों को सजा दिए बगैर छोड़ भी दूँगा।" राजा ने अत्यन्त गम्भीर होकर कहा।

यह सुन कर तीनों चोर उठे और राजा के चरण तल में मोर के अण्डे, जूतों के तले और पकवान वगैरह रख कर उन्होंने सारी चालाकी सुना दी, और फिर घोषणा के अनुसार राजा से इनाम माँगा।

चोरों का साहस देख कर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा -"वचनानुसार इनाम देने में मुझे कोई एतराज नहीं। लेकिन तुम लोगों ने जो काम किया है, उसके लिए तुम्हें कानूनन सजा मिलनी चाहिए। लेकिन अगर तुम लोग मेरी एक बात पूरी

कर दो, तो तुम्हें माफ करके इनाम ही नहीं दूँगा, बहुत बड़े ओहदे पर भी बिठा दूँगा।"

"बहुत अच्छा, आज्ञा दीजिए। वह काम क्या है ?" चोरों ने कहा।

राजा ने कहा-"कल सुबह मेरे खजाने में से तुम लोग तीन मणि चुराकर मेरे सामने पेश करो! साथ ही याद रखो- अगर नहीं ला सके, तो काट डाले जाओगे।"

राजा की बात सुन चोरों ने आपस में कुछ सलाह की और फिर कहा- "बहुत अच्छा ! लेकिन एक बात सुनिए ! हम जो मणि ले आएँगे, वे आप ही के खजाने के हैं, इस में आप को शुबह हो सकता है। इसलिए अपने खजानची को हुक्म दे दीजिए कि वह सब मणियों को गिन रखे। अगर कल उन में से तीन मणि कम हो जाएँ, तो यह साबित हो जाएगा कि हम जो मणि लाए हैं वह राजा के ही खजाने के हैं।"

राजा ने हामी भर दी और खजानची को हुक्म दिया कि शाम के पहले ही मणियों का हिसाब कर ले।

राजा के खजाने में मणियों की कई थैलियाँ थीं। उन सब का हिसाब लगाना एक आदमी के वश की बात नहीं थी। इसलिए खजानची ने राजा के यहाँ काम करने वाले बड़े-बड़े ओहदेदारों को मणियों की गिनती करने के लिए बुला भेजा।

उन ओहदेदारो में हमारे तीनों चोर भी वेश बदल कर मिल गए और खजाने में जा पहुँचे।

दूसरे दिन प्रातःकाल राजा के हाथों में चोरों ने तीन मणियाँ ला कर रख दी।

खजानची के पास खबर भेजने पर राजा को मालूम हो गया कि कल से आज तीन मणि कम हो गई हैं।

राजा बहुत खुश हुआ। तीनों चोरों को खुब इनाम दिए और उन्हें बड़े-बड़े ओहदों पर बिठा दिया।

# नाविक

गान्धार देश में कुबेर नामक एक बड़ा व्यापारी रहता था। छोटे-छोटे कारोबार करने के बाद वह करोड़ों का व्यापार करने लग गया। कुबेर गुप्त का कीर्तिसागर नामक एक पुत्र था। वह सूरत-शकल में ही नहीं, शारीरिक साहस और बुद्धि-चातुरी में भी नाम पाने लगा। सब से बड़ी बात तो उसमें यह थी कि वह बड़ा ही दयालु हृदय वाला था। कीर्तिसागर जब तक सयाना हुआ तब तक कुबेर गुप्त का बुढ़ापा आ गया। इसलिए कुबेर गुप्त ने बेटे को बुला कर सारा व्यापार सौंप दिया। एक दिन कीर्तिसागर ने समुद्र यात्रा की बात सोची और उसके लिए सब तैयारियाँ कर ली। नावें अनेक प्रकार की वस्तुओं से भरी हुई तैयार थीं। कुछ दोस्त मित्र भी साथ चल पड़े। जाते-जाते कुछ दिनों के बाद उन्हें एक किनारा मिला। उस किनारे पर नावें लगी और लङ्गर डाल दिए गए। फिर मैदान में उतर कर तम्बू ताने गए। कीर्तिसागर के अपने सब लोग थके-माँदे थे, इसलिए जल्दी ही सो गए। कीर्तिसागर की आँखें नहीं झपकी। सहसा उसके कानों में एक विचित्र आर्तनाद आकर पड़ा।

कीतिसागर चौंक कर उठा और उस ध्वनि का पीछा करता आगे बढ़ता गया। जाते-जाते वह एक जङ्गल में पहुँच गया और जो कुछ देखा उससे उसका कलेजा दहल उठा। कुछ लोगों को कुछ व्यापारी कोड़े मार रहे थे और वे ही लोग आर्तस्वर से रो रहे थे। उनके पास जाकर कीर्तिसागर ने गरज कर कहा-"रुक जाओ ! उन्हें मारो मत !

बैजनाथ

पहले यह बताओ कि उनका अपराध क्या है।" यह सुनकर उन व्यापारियों ने लापरवाही से कहा- "अपराध-शपराध कुछ नहीं। तुम्हें इससे क्या मतलब ? जाओ, भागो यहाँ से। ये लोग गुलाम हैं। हमने इन्हें कीमत देकर खरीदा है। इनको दूसरी जगह ले जाकर बेच देना ही हमारा कारोबार है। अगर ये लोग हमारे साथ अपनी इच्छा से नहीं चलेंगे तो हम यों ही इन्हें मार-पीटकर साथ ले जाएँगे।"

यह सुन कर कीर्तिसागर ने उनसे कहा-"अरे, तुम लोग गुलामों के कारोबारी हो ? बहुत अच्छा, तो इन सब को मैं खरीद लूँगा। बताओ, क्या दाम है इनका ?" इस तरह व्यापारियों ने जो रकम माँगी, उसे चुका कर कीर्तिसागर ने उन सब गुलामों के बन्धन खोल डाले। फिर कीर्तिसागर ने हर एक से पूछ-ताछ की और उनके नाम वाम जाने और सबों को अपने-अपने घर जाने का इन्तजाम कर दिया। यह देख सब के सब गुलाम बहुत खुश हुए और कीर्तिसागर का गुण गाते हुए अपनी-अपनी राह चले गए।

गुलाम जब अपने घर चले गए, तब वहाँ सिर्फ एक सुन्दरी और एक बूढ़ी रह गई। पूछने पर उस सुन्दरी

ने यों कहना शुरू किया-"मैं उत्कल देश की राजकुमारी हूँ। यह मेरी दादी है। हम जब देवी के मन्दिर में पूजा कर रही थीं. तो ये व्यापारी वहाँ आए और बाँध छाँध कर हमें यहाँ ले आए।"

वहाँ से उत्कल देश सैकड़ों मील दूर था। इसलिए वे दोनों कीर्तिसागर के साथ गान्धार देश जाने को तैयार हो गईं। उन दोनों को साथ लेकर कीर्तिसागर अपने डेरे की ओर लौटा।

डेरे पर पहुँचते ही कुबेरगुप्त बड़ी आतुरता से बेटे के पास पहुँचा। वह इस आशा से

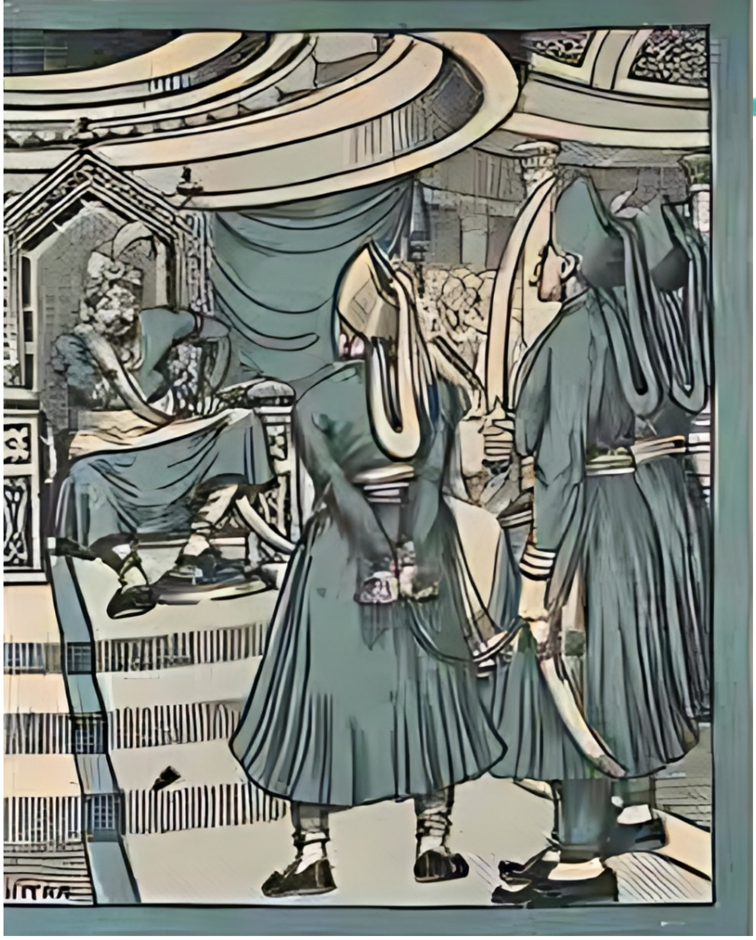

आया था कि-"देखें मेरा बेटा कितना धन किमा लाया है।" लेकिन उसके जवाब में कीर्तिसागर ने उसके सामने सुन्दरी और बुढ़ी को खड़ा कर दिया। उसने व्यङ्ग से कहा- "बहुत बड़ा काम कर आए हो। जाओ देख ली तुम्हारी चातुरी।"

बाप की यह बात सुन कर कीर्तिसागर को क्रोध आ गया। सुन्दरी और बुढ़ी को साथ लेकर यह घर से निकल पड़ा। बेकसूर बेटे को घर से जाते देख कर बाप का दिल पिघला और उस ने आदमी भेज कर कीर्तिसागर को बुलवा लिया।

"बेटा, जो हो गया सो हो गया। एक मौका और देता हूँ तुम्हें इस बार मेरे कहे मुताबिक तुम चलो और महान सम्पत्तिशाली होकर लौटो।" कहते हुए वह बेटे को खुद बन्दरगाह के पास ले गया। वहाँ एक जहाज तैयार था। उसे देख कर कीर्तिसागर अचम्भे में आ गया। यह क्या ? जहाज के आगे, सब की नजरों में पड़ने लायक, उत्कल राजकुमारी की बड़ी प्रतिमा टँगी हुई थी।

कीर्तिसागर ने पूछा-"यह क्या है ?" इसके जवाब में उसका बाप बोला- "इसमें रहस्य तो कुछ नहीं, लेकिन मुझ से मत पूछो। मन पर काबू रख कर कारोबार करो। लाभ उठाओ तुम्हारे आने तक ये दोनो यहीं रहेंगी।"

कीर्तिसागर रवाना हुआ। चलते-चलते बहुत दिनों के बाद वह जहाज एक बन्दरगाह पर लगा। तभी राजा के कुछ सिपाही आए और कीर्तिसागर को बाँध कर उस देश के राजा के पास ले गए। कुछ न समझ कर कीतिसागर बिस्मय से भर गया। उसने राजा से पूछा-"यह कैसा अन्याय है महाराज ?" यह सुनकर राजा का क्रोध और भी भड़क उठा। उसने गरज कर कहा- "दुष्ट कहीं का! मेरी राजकुमारी की प्रतिमा तूने जहाज में लगा रखी

है। बोल, कहाँ छिपा रखा है उसे ? सच बोल। नहीं तो देख लेना, तुम्हारी क्या हालत होती है?" कीर्तिसागर की समझ में शीघ्र आ गया कि यह उत्कल देश में आ गया है। कीर्तिसागर सूझ-बूझ का आदमी था। इसलिए उसने समझा-बुझा कर राजा को शान्त किया और अपनी पूरी कहानी उसे कह सुनाई।

कीर्तिसागर की बात सुन कर राजा को परमानन्द प्राप्त हुआ। फौरन उसने उसके बन्धन खुलवा दिए और अपने पास बिठा कर उसकी खूब आवभगत की।

कीर्तिसागर के कहने पर उत्कल महाराज, मन्त्री और परिवार के साथ गान्धार देश को चल पड़े। यों उत्कल महाराज को अपने घर आए हुए देख कर कुबेरगुप्त फूला न समाया। राजकुमारी दौड़ती हुई आकर बाप से लिपट गई। यह देख कर उत्कल महाराज की आँखें आनन्द अश्रु से उमड़ पड़ी।

राजा ने कहा-"ऐसी धर्म-बुद्धि वाले और प्रयत्नशील दामाद को पाकर मैं आज धन्य हो गया। मेरे सारे अरमान पूरे हो गए।" कुबेरगुप्त ने खुशी से उमड़ कर हामी भर दी। अपनी राजधानी में ही व्याह करने

का उत्कल महाराज ने निश्चय किया। इसलिए सब लोग शीघ्र वहाँ से रवाना हो गए। बीच समुद्र में पहुँचने पर उत्कल-राज के मन्त्री के मन में दुष्टता पैदा हो गई। उसने सोचा-"अगर यह शादी हो गई, तो दरबार से मेरा बोलवाला ही उठ जाएगा!" यह दुष्टता मन में आते ही उसने सोए हुए कीर्तिसागर को उठा कर समुद्र में फेंक दिया। सवेरा होने पर लोगों को पता चला कि कीर्तिसागर लापता है। अब क्या किया जाए ? विवश होकर सब लोग अपने-अपने घरों को लौट गए। उधर सागर में फेंके जाने पर कीर्तिसागर तैरने लगा और तैरते तैरते एक द्वीप में जा पहुँचा। यह

द्वीप एकदम निर्जन था। कुछ दिनों तक वह वहीं रहा। उसके बाद एक दिन एक जहाज वहाँ आ पहुँचा। उस जहाज को चलाने वाला एक बूढ़ा था। उसने कीर्तिसागर से पूछ-ताछ करके सारी बातें जान ली।

उस बूढ़े ने कीर्तिसागर से पूछा- "अगर मैं तुम्हें घर पहुँचा दूँ, तो तुम मुझे क्या दोगे ?" "अपनी आधी सम्पत्ति तुम्हें दे दूँगा" फौरन कह उठा वह कीर्तिसागर। वह बूढ़ा कीर्तिसागर को लेकर सीधे उत्कल राज्य के तट पर पहुँचा और उसे उतारकर बिना कुछ बोले ही, अपनी नाव लेकर चला गया।

कीर्तिसागर जहाज से उत्तर कर सीधे राज-महल की ओर चला। महल में जाते समय सिपाहियों ने उसे पकड़ा और ले जाकर राजा के सामने खड़ा कर दिया। कीर्तिसागर को देखते ही राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। असीम वेदना में पड़ी हुई राजकुमारी के कानों में जब यह खबर पहुँची, तो उसके अघमरे शरीर में प्राण लौट आए।

उसके बाद सच-झूठ का पता चल गया। लेकिन कीर्तिसागर की इच्छा से राजा ने अपराधी मन्त्री को छोड़ दिया। फिर कीर्तिसागर और राजकुमारी की शादी धूम-धाम से हो गई। राजा ने सङ्कल्प कर लिया था कि यह कीर्तिसागर को ही अपने राज्य का

उत्तराधिकारी बनाएगा। इसलिए एक अच्छी साइत देख कर उसके राज तिलक का इन्तजाम किया गया। नवरत्नों से खचित वस्त्रालङ्कारों तथा मणिमय मुकुट से सज्जित कर के कीर्तिसागर राज-सिंहासन पर बिठा दिया गया। राज सभा नव प्रभा से जगमगाने लग गई। आनन्द की उस घड़ी में एक गरीब बूढ़ा वहाँ आ पहुँचा। राजदूत उसे डाँट-डपट कर बाहर खदेड़ने लगे। लेकिन कीर्तिसागर ने उसे पहचान लिया और झट

उसे बुलवाया और अत्यन्त आदर-पूर्वक अपने पास बिठा लिया।

किसी को कुछ भी पता न चला। सब लोग आश्चर्य से देखने लगे। उसके बाद कीर्तिसागर ने उत्कल राज्य का एक मानचित्र मँगवाया और उसे सभा की दीवार पर टँगवा दिया। फिर उस बूढ़े की ओर मुड़ कर कहा-"दयालु पुरुष ! तुमने जो उपकार किया है, मैं उसे इस जन्म में नहीं भूल सकता। देखो, यह उत्कल राज्य का चित्र है। ईश्वर की दया से आज मैं इस राज्य का अधिकारी हो गया हूँ। अब इस मानचित्र में से तुमको जो हिस्सा लेना हो, आधों-आध लकीर खींच डालो- अभी दे दूँगा तुम्हें उत्कल का आधा राज।" यह सुन कर उस बूढ़े की आँखें छल छला आईं। वह कीर्तिसागर के पैरों पर जा पड़ा और गदगद स्वर में बोला-"कीर्तिसागर! सच-मुच तुम सदगुण सागर भी हो। मुझे यह राज्य क्यों ? तुमको याद हो या न हो, हजारों की कीमत वाला स्वातन्त्र्य-राज्य तो तुमने बिना माँगे मुझे उसी दिन दया करके दे दिया था। मैं कोई नाविक नहीं हूँ, उन्हीं गुलामों में से एक हूँ, जिन्हें तुमने गुलामी के बन्धनों से मुक्त करके आजाद कर दिया था। तुम्हें कष्ट में पड़े देख कर, कुछ ऋण मुक्त होने के ख्याल से में नाव लेकर तुम्हारे पास आ गया था। अभी तुम राजा होने जा रहे हो। यह जान कर तुम्हें आशीर्वाद देने आया हूँ। नहीं तो मुझे इस राज्य से क्या मतलब ?"
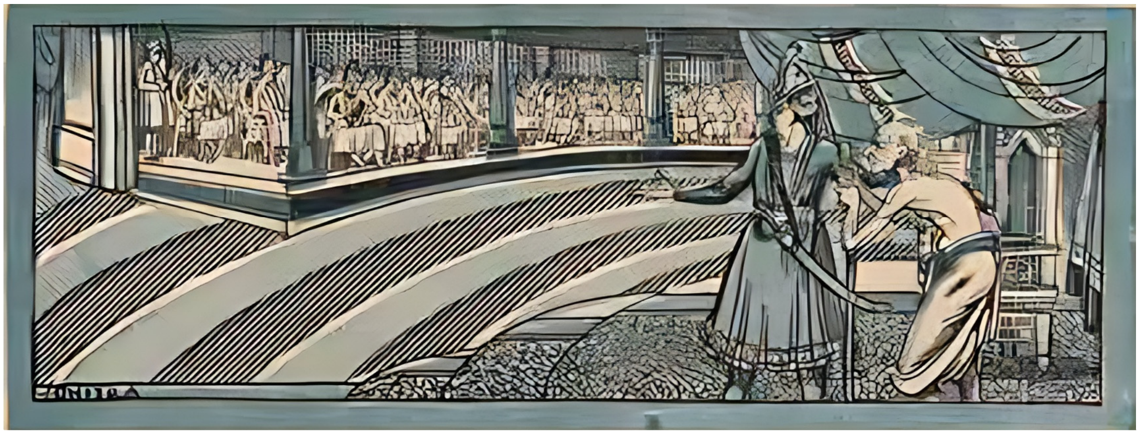
कीर्तिसागर ने राज्य सभा के सामने उस बूढ़े का बखान किया। सारी बातें सुन कर सब लोग विस्मय से कहने लगे-"गुलाम होने से क्या होता है? हाथ में आए हुए आधेराज्य को जिसने यों छोड़ दिया, वह कितना बड़ा त्यागी पुरुष हो सकता है।"